संसारी जीवोंकी अनन्तता

'जैन जगत्'के संपादक 'जैनधर्मका मर्म' शीर्षक लेखमाला प्रकाशित करते हुए ता० १६ जुलाई सन् ३२ के 'जैन जगत्'में दूसरे अध्यायके 'मतभेद और उपसंप्रदाय' प्रकरणमें लिखते हैं कि 'वीर भगवानके निर्वाणके २२० वर्ष बाद अश्वमित्रने यह वाद खड़ा किया कि एक दिन संसारमें एक भी जीव न रहेगा।'

लेखमालाके लेखक महोदयने इस शंकाको जितना महत्व दिया है, विचारकी दृष्टिसे वह उतना महत्व अवश्य रखती है। मैं भी उसका समाधान विचारकी दृष्टिसे ही कर रहा हूँ और लेखकमहोदयसे भी यह आशा रखता हूँ कि वे इस समाधानपर विचारकी दृष्टि ही रक्खेंगे।

अश्वमित्रकी शंका—'एक दिन संसारमें एक भी जीव न रहेगा।' इसका अभिप्राय लेखकमहोदयने यह निकाला है और जो मेरी समझसे भी ठीक जान पड़ता है कि छः महिना आठ समयमें ६०८ जीव सतत मोक्ष जाते रहते हैं, इसलिये यह शंका होती है कि इससे तो एक दिन संसार जीव-शून्य हो जायगा, क्योंकि जीवराशि बढ़ती तो है नहीं, इसलिये वह समाप्त हो जायगी।

इस शंकाकी पुष्टि एवं समाधानका प्रकार बतलाते हुए लेखकमहोदयने जो कुछ विवेचन किया है उसमें निम्नलिखित बातोंका उत्तर होना भी आवश्यक हो जाता है।

१. शास्त्रोंमें जीवराशिसे अनन्तानन्तगुणी व्यवहारकालराशिके बतलानेका अभिप्राय क्या है?

२. शास्त्रोंमें भव्य और अभव्यकी केवलज्ञानके गुणानुवाद करनेके लिये कल्पना की गयी है या तात्विक कथन है?

इनमेंसे भव्य और अभव्यके विषयमें स्वतन्त्र लेख द्वारा प्रकाश डालूंगा, केवल पहिली बातकी उत्तर इस शंकाके उत्तरके साथ इसी लेखमें करूँगा।

वैसे तो यह समाधान "छः महीना आठ समयमें ६०८ जीव मोक्ष जाते हैं।" इस सिद्धान्तको ध्यानमें रख करके किया जा रहा है। यदि यह नियम न भी माना जावे तो भी समाधानके मूलमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पहुँचती है।

समाधान—जगत्में दो प्रकारके जीव हैं—भव्य और अभव्य। भव्य मोक्ष जा सकते हैं, अभव्य नहीं, इसलिये एक तो अभव्य जोव संसारमें रहेंगे ही। दूसरी बात यह है कि भव्य जीवोंका मोक्ष जाना सतत् जारी रहेगा तो भी उनकी समाप्ति कभी नहीं होगी। इसका कारण यह है कि काल भूत, वर्तमान और भविष्यरूप है। भूतकाल अनादि होकरके भी मुक्तजीवराशिके असंख्यात गुणे समयोंमें विभक्त है, कारण कि छः महिना आठ समयोंमें ६०८ जीव मोक्ष चले जाते हैं। छः महीना आठ समयोंके असंख्यात समय होते हैं। इनमेंसे यदि एक जीवके मोक्ष जानेके समयोंकी औसत निकाली जाय तो यही सिद्ध होता है कि असंख्यात समयोंमें एक जोव मोक्ष चला जाता है। यह क्रम अनादिकालसे जारी है। इसलिये आजतक जितने जीव मोक्ष चले गये, उनसे असंख्यात गुणे कालके समय भी बीत गये, उनके इन्हीं बीते हुए समयोंको भूतकाल कहते हैं। वर्तमान काल एकसमय मात्र है। भविष्यत्कालके कितने समय होना चाहिये, इस बातका विचार किया जाता है।

जबकि जैन सिद्धान्त यह बतलाता है कि जोवोंका मोक्ष जाना सतत् जारी रहेगा, फिर भी संसार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भव्यजीवोंसे शून्य नहीं होगा, तो इससे यह बात अवश्य निकल आती है कि भविष्यत्कालके समय भी उतने ही माने जायँ, जितने (समयों)में पूर्वोक्त क्रमसे भव्यजीव मोक्ष भी जाते रहें किन्तु कालकी समाप्ति होनेपर भी भव्यजीवोंकी समाप्ति न हो; लेकिन कालकी समाप्ति मान लेनेपर भी भव्यजीवोंकी समाप्ति न मानी जाय, तो यह शंका उपस्थित होती है कि वे फिर कालके बिना मोक्ष कैसे जा सकेंगे ? इसलिये जितने भव्य जीव इस समय विद्यमान हैं उनसे उतने ही अधिक भविष्यत् कालके समय माने जायँ, जितनेमें कि समस्त भव्य जीव असंख्यात समयोंमें एक जीवके हिसाबसे मोक्ष जा सकें, अर्थात् अन्तिम भव्य जीवके मोक्ष जानेका समय भविष्यत्कालका अन्तिम समय सिद्ध हो सके, इसलिये जिस तरह भूतकालके समय मुक्तजीवराशिसे असंख्यातगुणे सिद्ध होते हैं उसी प्रकार भविष्यकालके समय भी विद्यमान भव्यराशिसे असंख्यातगुणे सिद्ध हुए। यहाँपर गुणकार असंख्यातका प्रमाण वही है, जितना कि औसतसे एक जीवके मोक्ष जानेका समय निश्चित होता है।

इसके बाद यह आपत्ति खड़ी होती है कि भविष्यकालको विद्यमान भव्यराशिसे असंख्यातगुणा माननेसे जब उन दोनोंकी समाप्ति हो जायगी, तब एक तो कालद्रव्यका अभाव मानना पड़ेगा तथा इसके साथ अन्य द्रव्योंका भी अभाव मानना होगा, कारण कि कोई भी द्रव्य बिना परिणमनके अपनी सत्ता नहीं रखता, परिणमन करानेवाला कालद्रव्य ही माना गया है और जब पूर्वोक्त प्रकारसे कालद्रव्यमें परिणमनका अभाव हो जानेसे कालद्रव्यका अभाव सिद्ध होता है तो उसके अभावमें अन्य द्रव्य भी अपनी सत्ता कायम नहीं रख सकते हैं, जो कि प्रमाण-विरुद्ध है, कारण सत्का विनाश कभी नहीं होता।

इसका समाधान भी इस ढंगसे किया जा सकता है कि भविष्यत्कालके समय और भव्यजीव दोनों ही अक्षयानन्त हैं, जिससे भविष्यत्कालके समय और भव्यजीवोंमें कमी होनेपर भी दोनोंका अन्त नहीं होगा। अर्थात् कालद्रव्यके समय सदा भविष्यसे वर्तमान और वर्तमानसे भूत होते ही रहेंगे, जिससे काल द्रव्यकी सत्ता कायम रहेगी और उसके सद्भावमें अन्य द्रव्य भी परिणमन करते हुए अपनी सत्ता कायम रख सकेंगे।

शंका—भविष्यत्कालके समयों और भव्यजीवोंमें बराबर कमी होती जा रही है तो उनका अन्त अवश्य होगा, यह मानना कि कमी तो होती जावे और अन्त कभी भी न हो, बिल्कुल असंगत है ?

उत्तर—जब हम अतीतकी ओर दृष्टि डालते हैं तो यही कहना पड़ता है कि जो कुछ हम देख रहे हैं वह अनादिकालसे परिवर्तित होता हुआ अवश्य चला आ रहा है। इस अनादिकालकी सीमा निश्चित करना चाहें तो नहीं हो सकती, तब यही निश्चित होता है कि आजतक इतना काल बीत चुका, जिसका कि अन्त नहीं, अर्थात् वर्तमान समयसे बीते हुए समयोंकी गणना की जाय तो उनका कहींपर अन्त नहीं, कारण अन्त आ जानेसे उसमें अनादिपनेका अभाव हो जायगा। इसी तरह जब अनादिकालसे भव्यजीव मोक्ष जा रहे हैं तो इस समयसे मुक्त जीवोंकी गणना करनेपर उनका कहीं अन्त नहीं होगा। इसमें विचार पैदा होता है कि भविष्यत्कालके समयों और भव्यजीवोंमें जब इतनी अधिक संख्याकी कमी हो गयी, जिसका अन्त नहीं, तो अबतक समाप्त क्यों नहीं हुई ? यदि कहा जाय कि भविष्यत्कालके समयों और भव्यजीवोंकी संख्या इतनी अधिक है कि अनादिकालसे कम होते हुए भी वह अभीतक तो समाप्त नहीं हुई, लेकिन असंख्यात या अनन्त समयोंमें वह अवश्य समाप्त हो जायगी, तो इसका तात्पर्य यही होगा कि कालका और जीवोंके मोक्ष जानेका प्रारम्भ किसी निश्चित समयसे हुआ है और इस प्रकार हमारी अनादिकल्पना केवल कल्पनामात्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रह जाती है। जिस राशिकी कमीके प्रारम्भ होनेकी कल्पना नहीं कर सकते, ऐसी हालतमें वह राशि कितनी ही बड़ी क्यों न हो, यदि वह अक्षयानन्त नहीं है तो बहुत पहिले ही नष्ट हो जाना चाहिये थी, घटनेपर भी यदि वह आज भी विद्यमान है तो 'कभी नष्ट नहीं होगी' यह सिद्धान्त अटल हो जाता है। जिस राशिकी घटते-घटते समाप्ति हो जाय, वह अनन्त तो कही जा सकती है लेकिन अक्षयानन्त नहीं। अनन्तराशिकी यदि समाप्ति होती है तो उसके घटनेका प्रारंभ भी अवश्य होता है किन्तु अक्षयानन्त राशि घटनेके प्रारंभ और समाप्ति दोनोंसे रहित होती है, उसकी सदा मध्यकी हालत बनी रहती है। भविष्यत्कालके समय अनादिसे वर्तमान होते हुए भूतरूप हो रहे हैं, भव्यजीव अनादिसे मोक्ष जा रहे हैं फिर भी दोनोंकी सत्ता इस समय मौजूद है, इसलिये कभी इनका अन्त नहीं होगा।

शंका--(१) जीवका संसार अनादिकालसे चला आ रहा है। (२) जीवका भव्यत्वभाव अनादिकालसे है। (३) आज जिस कार्यकी उत्पत्ति हुई तो कहना होगा कि अनादिकालसे आजतक उसका प्रागभाव रहा। लेकिन संसार, भव्यत्व और प्रागभावका अन्त भी माना जाता है ?

उत्तर--प्रत्येक द्रव्यका स्वभाव परिवर्तन करनेका है। परिवर्तनमें पूर्व पर्यायका नाश और उत्तर पर्यायकी उत्पत्ति होती है अर्थात् पूर्व वर्तमान पर्याय भूत हो जाती है और उत्तर भविष्यत् पर्याय वर्तमान हो जाती है, यह क्रम अनादिकालसे चला आ रहा है और अनन्तकाल तक रहेगा।

(१) जीव द्रव्यके बहुतसे परिणमन पुद्गलद्रव्यसे संबद्ध हालतमें होते हैं। लेकिन पुद्गलद्रव्यका संबन्ध छूट सकता है, इसलिये जबतक पुद्गलद्रव्यसे संबद्ध हालतमें जीव परिणमन करता रहेगा, तबतक जितनी पर्यायें उत्पन्न या विनष्ट होंगी उन सबके समूहका नाम ही जीवका संसार है और इसके आगे जो पर्यायें उत्पन्न या विनष्ट होंगी, उन सबके समूहका नाम जीवका मोक्ष है।

(२) भव्यत्वभाव भी इसी तरहकी पर्यायोंकी अपेक्षा लिये हुए है, कारण कि जबतक जीवको सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति नहीं होती, तबतक तो भव्यत्वभाव उस जीवमें संपूर्णरूपसे विद्यमान रहता है और सम्यग्दर्शनके सद्भावसे जिस समय जीवको मोक्ष हो जाता है वहाँतककी पर्यायोंके परिवर्तनके क्रमसे भव्यत्वभाव भी नष्ट होते-होते अन्तमें सर्वथा नष्ट हो जाता है।

(३) कार्यका प्रागभाव भी उस कार्यके पूर्व अनादिकालसे होनेवाली द्रव्यकी पर्यायोंके समूहका ही नाम है।

जबकि पर्यायें हमेशा उत्पन्न और विनष्ट होती रहती हैं अर्थात् भविष्यत् पर्यायें वर्तमान और वर्तमान भूत होती रहती हैं तो जैसा-जैसा पर्यायोंमें अन्तर आता जायगा वैसा-वैसा संसार, भव्यत्व और प्रागभावमें भी अन्तर आता जायगा और जब ये पर्यायें क्रमसे उत्पन्न होकर विनष्ट हो जायेंगी तब जीवके संसार व भव्यत्वका और कार्यके प्रागभावका व्यवहार नहीं होगा, लेकिन यह कभी संभव नहीं, कि ऐसा होनेसे उस द्रव्यकी आगेकी पर्यायोंके उत्पाद और विनाशका क्रम भी नष्ट हो जायगा। यह क्रम अनादि है तो अनन्त अवश्य रहेगा। भविष्यत् कालका एक समय वर्तमान होता है और फिर भूत हो जाता है। इसी तरह दूसरे, तीसरे समयोंका भी नियम है। भव्यजीवोंमेंसे छः महिना आठ समयमें ६०८ जीवोंके मोक्ष जानेका नियम है और इन दोनोंका यह क्रम अनादिकालसे चला आ रहा है तो इसका कोई कारण नहीं कि वह क्रम नष्ट हो जायगा।

शंका--काल आकाशकी तरह अपरिमित है, इसलिये उसकी समाप्ति न हो, लेकिन भव्यजीव जितने मोक्ष चले जाते हैं वे फिर कभी संसारमें आते नहीं, इसलिये उनका अन्त अवश्य हो जाना चाहिये ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर—यद्यपि इस शंकाका उत्तर भव्यजीवराशिके पूर्वोक्त अक्षयानन्तपनेसे ही हो जाता है जब कि मोक्ष जानेका क्रम अनादिसे है, तो भी कुछ विशेष विचार किया जाता है।

जिस तरह भूतकालके समय मुक्तजीवराशिसे असंख्यातगुणे हैं उसी तरह भविष्यत्कालके समय भी वर्तमान भव्यराशिसे असंख्यातगुणे हैं। ऐसी हालतमें दोनों ही राशियाँ परिमित सिद्ध होती हैं। लेकिन यह परिमितता अक्षयानन्तराशियोंकी हीनाधिकतासे ही मानी गयी है। परिमितताका यह जो लक्षण किया जाता है कि 'जिसकी समाप्ति हो सके' वह अवश्य ही ऊपर कही हुई राशियोंमें नहीं पाया जाता है। जिस तरह आकाशके प्रदेशोंकी संख्या पूछी जाय तो यही उत्तर मिलता है कि अन्तरहित है। लेकिन उनकी परिमितता भी इस ढंगसे सिद्ध की जा सकती है।

लोकाकाशके एकप्रदेशपर अनेक जीव, अनेक पुद्गलपरमाणु, धर्म और अधर्म द्रव्यका एक-एक प्रदेश तथा एक कालाणू विद्यमान है। इन सबको वह प्रदेश एक ही समयमें स्थानदान देता है, इससे उस प्रदेशके अनेक स्वभाव सिद्ध होते हैं, कारण कि एक स्वभावसे वह आकाशप्रदेश भिन्न-भिन्न वस्तुओंको स्थानदान नहीं दे सकता तथा आकाश प्रदेश अनन्त हैं। वे भिन्न-भिन्न समयमें भिन्न-भिन्न परिवर्तन करते रहते हैं। यदि समयभेदसे भिन्न-भिन्न परिवर्तन नहीं माने जावें तो आकाशमें कूटस्थता सिद्ध होगी, जो कि वस्तुका स्वभाव नहीं है। दोनों ही प्रकारसे आकाशके स्वभावोंकी गणना की जाय तो आकाशके प्रदेशोंकी तरह अक्षयानन्त होनेपर भी वे स्वभाव उन प्रदेशोंसे अनन्तगुणे सिद्ध होंगे और आकाशके प्रदेश अक्षयानन्त होनेपर भी उन स्वभावोंके अनन्तवें भाग मात्र सिद्ध होंगे। इसी तरह कालकी भूत, वर्तमान और भविष्यत् समयराशि भी अपने स्वभावोंके अनन्तवें भाग मात्र सिद्ध होती है। यही आकाश और कालकी परिमितता है। ये राशियाँ अक्षयानन्त होकरके भी उक्त प्रकारसे हीनाधिकरूपमें रहती हैं, इसलिये परिमित कही जा सकती हैं तो परिमित होते हुए भी जिस प्रकार अक्षयानन्त होनेसे कालका अभाव नहीं होगा उसी प्रकार परिमित होते हुए भी अक्षयानन्त होनेसे भव्यजीवोंका भी अभाव नहीं होगा। जिस तरह भव्य जीव मोक्ष चले जाते हैं। इसलिये उनमें कमी होती जा रही है। उसी तरह भविष्यत्कालके समय भी बीतते चले जाते हैं; इसलिये उनमें भी कमी होती जा रही है।

शंका—जैन शास्त्रोंमें कालद्रव्यके अणु स्वीकार किये गये हैं। उनका तो कभी अभाव होता नहीं, कारण कि सत्का विनाश नहीं होता, भूत, वर्तमान और भविष्यत्रूप उनकी पर्यायें हैं, जो कि उत्पाद व्यय रूप हैं। कालद्रव्यके सद्भावमें ये पर्यायें हमेशा पैदा होती रहेंगी इसलिये उनका कभी अन्त नहीं होगा, इस तरह नये जीवोंकी उत्पत्ति तो होती नहीं, जिससे कि वे कम होते हुए भी समाप्त न हों ?

उत्तर—यह बात ठीक है कि भूत, वर्तमान और भविष्य कालाणुकी पर्यायें हैं। लेकिन विचारना यह है कि ये पर्यायें हमेशा नवीन-नवीन पैदा होती हैं अथवा जितनी भी कालाणुकी पर्यायें हैं वे सब कालाणुमें शक्तिरूपसे विद्यमान हैं और वे ही भविष्यसे वर्तमान और वर्तमानसे भूत होती हुई अनादिकालसे चली आ रही हैं और चली जायेंगी।

द्रव्य त्रैकालिक पर्यायोंका पिण्ड है। इसलिये द्रव्यकी जितनी पर्यायें हो सकती हैं वे चाहे भूत हों या वर्तमान अथवा भविष्य, द्रव्यमें एक ही साथ रहती अवश्य हैं लेकिन इतना भी अवश्य है कि उस समयमें द्रव्यकी भूत पर्याय भूतरूपसे वर्तमान पर्याय वर्तमान रूपसे और भविष्यत्पर्यायें भविष्यरूपसे ही रहती हैं। यदि वर्तमान पर्यायके साथ द्रव्यमें भूत और भविष्यत्पर्यायोंका सर्वथा अभाव माना जाय, तो यह अभाव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकाशके फूलकी तरह तुच्छाभावरूप ही होगा, जिससे आकाशके फूलकी जिस प्रकार कभी उत्पत्ति नहीं होती उसी प्रकार घटकी वर्तमान पर्यायकी भी उत्पत्ति नहीं होना चाहिये तथा ज्योतिःशास्त्रसे जो भावी चन्द्रग्रहणादिका पहिलेसे ही ज्ञान कर लिया जाता है, वह भी असंगत ठहरेगा, कारण कि पहली अवस्थामें वह तुच्छाभाव रूप ही मान लिया गया है। इसलिये वर्तमान पर्यायका इसकी पहली अवस्थामें द्रव्यमें भविष्यद्रूपसे सद्भाव अवश्य मानना पड़ता है। इसी तरह वर्तमान पर्यायके साथ भूतपर्यायोंका द्रव्यमें भूत-रूपसे सद्भाव नहीं माननेसे वर्तमानमें ज्योतिःशास्त्रादिके द्वारा भूत अवस्थाका ज्ञान असंगत ठहरेगा, क्योंकि भूतपर्यायोंको द्रव्यमें तुच्छाभावात्मक मान लिया गया है। इसलिये प्रतिसमय द्रव्यमें त्रैकालिक अनन्त पर्यायें अपने-अपने रूपमें अवश्य रहती हैं और वे ही परिवर्तन करती हुई भविष्यसे वर्तमान और वर्तमानसे भूत हो जाती हैं, ऐसा मानना युक्तिसंगत प्रतीत होता है। जैनशास्त्रोंमें जो द्रव्यके परिवर्तनमें द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावको कारण माना गया है उनमें भाव इन्हीं त्रैकालिक पर्यायोंका नाम है अर्थात् जिस द्रव्यमें जो वर्तमान पहले भविष्यरूप होगी वही वर्तमानरूप हो सकेंगी, जो वर्तमान होगी वही भूतरूप हो सकेगी। वर्तमान पर्यायमें भविष्यत्पर्याय कारण पड़ती है अर्थात् भविष्यत्पर्याय ही वर्तमानरूप हो जाती है और भूतपर्यायमें वर्तमान पर्याय कारण पड़ती है अर्थात् वर्तमान पर्याय ही भूतपर्यायरूप हो जाती है इसलिये यह सिद्धान्त भी संगत हो जाता है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप परिणमन नहीं करता, अन्यथा कोई कारण नहीं, कि पुद्गलद्रव्यमें जीवद्रव्यकी पर्यायें पैदा न हों। इसी तरह भूतपर्यायें भूतरूपसे परिणमन करती हुई द्रव्यमें विद्यमान अवश्य रहती हैं, इसलिये "सत्का विनाश और असत्की उत्पत्ति नहीं होती" यह सिद्धान्त द्रव्यकी त्रैकालिक पर्यायोंमें भी लागू होता है क्योंकि सत्पर्यायोंकी तुच्छाभावरूप विनाश और आकाशके फूल-की तरह असत् पर्यायोंकी उत्पत्ति माननेमें पूर्वोक्त दोष आते हैं।

प्रत्येक द्रव्यकी त्रैकालिक पर्यायें उतनी ही हैं जितने कि कालाणुके भूत और भविष्य समय हैं और जब तक इन पर्यायोंका द्रव्यमें परिणमन हो रहा है तभी तक उस द्रव्यका सद्भाव है। जब तक द्रव्यकी जो पर्याय भविष्यरूप रहती है तब तक द्रव्यमें उस पर्यायका सद्भाव शक्तिरूपसे माना जाता है और जब वह पर्याय वर्तमान हो जाती है तब वह व्यक्त पर्याय मानी जाती है। इसलिये द्रव्यकी भविष्यत्पर्यायका वर्तमान हो जाना ही उत्पाद और वर्तमानका भूत हो जाना ही विनाश माना जाता है। हम लोगोंका प्रयोजन वर्तमान पर्यायसे ही सिद्ध होता है तथा हमारी इन्द्रियाँ वर्तमान पर्यायको ही ग्रहण कर सकती हैं, इसलिये वर्तमान पर्यायको व्यक्त पर्याय कहा जाता है।

इस तरहसे काल जब द्रव्य है तो उसके भूत, वर्तमान और भविष्य जितने भी समय-पर्याय हो सकते हैं उन सबका कालद्रव्यमें अपने-अपने रूपमें सद्भाव अवश्य मानना पड़ता है, अन्यथा पूर्वोक्त दोष आते हैं और क्रमसे एक-एक समय भविष्यसे वर्तमान और वर्तमानसे भूत होता जा रहा है, तो जिस तरह जीव मोक्ष जा रहे हैं इसलिये उनमें कमी होती जा रही है उसी तरह कालके भविष्यत् समय भी वर्तमान और भूत होते जा रहे हैं इसलिये उनमें भी कमी होती जा रही है। साथमें यह भी है कि जब कालके असंख्यात समय (छः महिना आठ समयके जितने समय हों) बीत जाते हैं तब तक ६०८ जीव मोक्ष जा सकते हैं। इसलिये यह बात भलीभाँति सिद्ध हो जाती है कि यदि भव्यजीवोंकी समाप्ति मानी जाय तो उनके असंख्यातगुणे कालके समयोंकी समाप्ति अवश्य माननी पड़ेगी, जिससे कालद्रव्यका भी अभाव हो जायगा। यदि सत्का कभी विनाश नहीं होता इसलिये काल द्रव्यके सद्भावके लिये उसके समयोंकी समाप्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं मानी जाय तो उसके असंख्यातवेंभागप्रमाण तथा जिनकी समाप्ति हो तो कालके समयोंकी समाप्तिके साथ ही हो सकती है, भव्यजीवोंकी समाप्ति कैसे हो सकती है ?

शंका—यहाँ पर भूतकालके समयोंका प्रमाण मुक्तजीवराशिसे असंख्यातगुणा ही बतलाया गया है तथा वर्तमान एक समयमात्र और भविष्यत्कालके समय विद्यमान भव्यराशिके असंख्यातगुणे बतलाये हैं। लेकिन शास्त्रोंमें कालराशिका प्रमाण सर्वजीवराशिका अनन्तगुणा बतलाया गया है।[1] इसलिये यह कथन शास्त्रविरुद्ध होनेसे प्रमाण नहीं माना जा सकता है ?

उत्तर—पूर्वकथनमें वर्तमान समय एक ही बतलाया गया है। वह उत्पाद और विनाशके क्रमसे बतलाया गया है। वर्तमान समय कालाणुकी पर्याय है। कालाणु लोकमें असंख्यात माने गये हैं तथा एक ही साथ समस्त लोकाकाशमें वर्तमान समय रहता है। जब प्रत्येक कालाणु स्वतन्त्र-स्वतन्त्र हैं तो इनकी पर्यायें भी स्वतन्त्र-स्वतन्त्र मानना पड़ती हैं। ऐसी हालतमें वर्तमान समयोंका प्रमाण कालाणुओंके समान असंख्यात हो जाता है। ऐसा ही कालाणुओंके भूत और भविष्यत् समयोंका भी प्रमाण समझना चाहिये। इसलिये पहले बतलाई हुई कालराशिका सर्वकालाणुओंके प्रमाणसे यदि गुणा कर दिया जाय तो सर्वसम्पूर्ण कालाणुओंके भूत, वर्तमान और भविष्यत् समयोंका प्रमाण निकल आता है। इतना होनेपर भी सर्वकालाणुओंके भूत, वर्तमान और भविष्य समयोंका प्रमाण मुक्त और वर्तमान भव्यराशिके प्रमाणसे असंख्यातगुणा ही सिद्ध होता है। इसके आगे यह विचार पैदा होता है कि कालाणुओंकी वर्तमान पर्यायें एक समय तक ही वर्तमान रहकर भूत हो जाती हैं। लेकिन वर्तमान व्यवहार कभी न नष्ट हुआ और न होगा, इसका कारण क्या माना जाय ? इसके लिये यही सुसंगत उत्तर दिया जा सकता है कि जब कालाणुओंकी एक-एक वर्तमान पर्याय भूत हो जाती है तो उसी समय उनकी एक-एक भविष्यत् पर्याय वर्तमान हो जाती है, यह क्रम अनादिकालसे चला आ रहा है और अनन्तकाल तक चलता जायगा अर्थात् अनादिकालसे आज तक जितने समय बीत चुके वे सब वर्तमान होकर ही भूत हुए हैं एवं अनन्तकाल तक जितने समय बीतेंगे वे सब भी वर्तमान हो करके ही भूत होंगे। इसी प्रकार जब वर्तमान समय भूत हो जाता है तो प्रथम समयमें भिन्न प्रकारका, द्वितीय समयमें भिन्न प्रकारका, इसी तरह तीसरे, चौथे आदि अनन्तसमयोंमें अनन्तप्रकारका ही भूतपना उसमें रहेगा तथा प्रत्येक समयका भविष्यत्पना भी भिन्न-भिन्न कालमें भिन्न-भिन्न प्रकारका रहेगा। मान लीजिये कि आजका दिन आज वर्तमान है, आजसे जो भविष्यका दशवाँ दिन है वह कलके दिन भविष्यका नववाँ दिन कहा जायगा, परसोंके दिन आठवाँ, इसी तरह क्रमसे सातवाँ आदि होता हुआ दशवें दिन तक वर्तमान कहा जाने लगेगा तथा उसके आगे भूतका पहला, दूसरा, तीसरा आदि क्रमसे कहा जायगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रत्येक कालाणुके जितने भूत, वर्तमान और भविष्यत् समय हैं वे प्रतिक्षण भिन्न-भिन्न परिणमन करते हैं और प्रत्येक समयके ये परिणमन उतने ही हो सकते हैं जितने कि प्रत्येक कालाणुके भूत, वर्तमान और भविष्यके समय बतला आये हैं। यदि ऐसा नहीं माना जाय तो आज दिन जो वर्तमान व्यवहार है वह इसके पहले व इसके आगेके दिन नहीं होना चाहिये। लेकिन इसके पहले व आगेके दिनमें भी हम वर्तमानका व्यवहार करते हैं अर्थात् जैसा आजके दिनको हम आज वर्तमान कहते हैं वैसे ही कलके दिनको कल वर्तमान कहेंगे, इसका कोई-न-कोई कारण अवश्य होना चाहिये और यह यही हो सकता है कि कालाणुका प्रत्येक समय प्रतिक्षण परिवर्तन करता रहता है। ये सब कालाणुके ही परिवर्तन हैं। इनका प्रमाण सम्पूर्ण कालाणुओंके जितने भूत, वर्तमान और भविष्यत् समय हैं उनसे अनन्तानन्तगुणा सिद्ध होता है जो

१. गोम्मटसार जीवकाण्ड पर्याप्तिप्ररूपणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि सर्वजीवराशिसे अनन्तगुणा होगा और यही प्रमाण सर्वव्यवहारकालराशिका प्रमाण कहा जाने योग्य है, कारण कि व्यवहारनाम पर्याय अथवा परिवर्तनका है और ये परिवर्तन पूर्वोक्त प्रकारसे इतने हो सकते हैं, हीनाधिक नहीं। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि भव्यजीव सतत् मोक्ष जाते रहेंगे, फिर भी संसार जीव-शून्य नहीं होगा तथा मोक्षमार्ग भी बन्द नहीं होगा।

●

जैनदर्शनमें भव्य और अभव्य

इनके विषयमें ता० १६ जुलाई सन् १९३२ के "जैन जगत्" में सम्पादकमहोदयने निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं—"जैन शास्त्रोंमें जीवोंके दो भेद मिलते हैं—भव्य और अभव्य। भव्योंमें मोक्ष प्राप्त करनेकी योग्यता है, अभव्योंमें नहीं। ये भेद पारिणामिक या स्वाभाविक कहलाते हैं, परन्तु शक्ति तो सभी जीवोंमें एकसरीखी है। अभव्योंमें भी केवलज्ञानकी शक्ति है। यदि ऐसा न होता तो अभव्योंको केवल-ज्ञानावरणकर्मकी जरूरत ही नहीं रहती। इसलिये भव्य और अभव्यका स्वाभाविक भेद बिलकुल नहीं जँचता। अभी तक इस विषयमें मेरे निम्नलिखित विचार रहे हैं। अभव्योंकी कल्पना तीर्थंकरोंके महत्त्वको बढ़ानेके लिये है....."। आगे इसीकी पुष्टि की गयी है।

लेकिन बात ऐसी नहीं है। शास्त्रोंमें जो भव्य और अभव्यका भेद बतलाया गया है वह वास्तविक है। और मोक्ष जानेकी योग्यता व अयोग्यतासे ही किया गया है अर्थात् जिसमें मोक्ष जानेकी योग्यता है वह भव्य है और जिसमें नहीं है वह अभव्य है।

शंका—जबकि भव्योंकी तरह अभव्योंमें भी केवलज्ञानकी शक्ति है तब उनमें मोक्ष जानेकी योग्यता क्यों नहीं है?

उत्तर—अभव्योंमें केवलज्ञानकी शक्ति है, इसका तात्पर्य यह है कि जीवोंका जीवत्त्व (चैतन्य) पारिणामिकभाव माना गया है और संपूर्ण जीवोंका असाधारण स्वरूप होनेसे वह संपूर्ण जीवोंमें पाया जाता है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र, सुख, वीर्य आदि उसी जीवत्वके विशेष हैं। इसलिये जीवत्त्वके सद्भावमें इनकी सत्ता संपूर्ण जीवमें अनायास सिद्ध हो जाती है। मोक्ष जानेकी योग्यताका मतलब केवलज्ञानादिके प्रकट होने-की योग्यतासे है, कारण जीवोंके ज्ञानादिगुण कर्मोंसे आच्छादित हैं। इसलिये भव्य और अभव्यका लक्षण इस प्रकार हो जाता है, जिस जीवमें केवलज्ञानादिके प्रकट होनेकी योग्यता है वह भव्य है और जिसमें यह योग्यता नहीं है वह अभव्य है। अभव्योंमें केवलज्ञानकी शक्ति है, इसका अर्थ इतना ही करना चाहिये कि अभव्योंमें कर्मोंसे आच्छादित केवलज्ञानका सद्भाव है, उसकी अभिव्यक्ति नहीं होती। यह अर्थ कि अभव्योंमें भी केवलज्ञानके प्रकट होनेकी योग्यता है, असंगत ही है।

शंका—भव्य और अभव्य दोनों प्रकारके जीवोंमें समानरूपसे केवलज्ञान कर्मोंसे आच्छादित रहता है, ऐसी हालतमें भव्योंका केवलज्ञान प्रकट हो, अभव्योंका नहीं, यह भेद कैसे हुआ?

उत्तर—केवलज्ञानादिकी प्रकटता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके मिलनेपर होती है—(१) द्रव्य—जिस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org